International Research Journal ISSN-0975-3486 VOL. I * ISSUE—5 RNI : RAJBIL/2009/30097

शोध पत्र

Feb, 2010

कच्छ के भीमगुड़ा व पाण्डवधाम का ऐतिहासिक अनुशीलन एवं घटोत्कचवंशीय सोमवंशीय क्षत्रियों का संशोधित इतिहास

*डॉ. प्रो. चन्द्रिकासिंह सोमवंशी
** प्रो. महेन्द्रकुमार धनजी सीजु

* रिसर्च स्कॉलर, आदीपुर, कच्छ
** हिन्दी विभाग, तोलानी कॉलेज ऑफ आटर्स एण्ड सांइस, आदीपूर, कच्छ

सोमवंशी राजाओं के कई शिलालेख सम्बान्धित अभिलेख भारत के मेकला, कोशल, उत्कल व अमरकन्टक की पहाड़ी के चारों तरफ के क्षेत्रों में बिखरे हुए पाये गये हैं, जिससे इस राजवंश के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है। उनकी साहित्यिक मुद्राशास्त्र सम्बन्धी व भवन निर्माण के स्त्रोत भी पाण्डववंशी राजाओं व उनके समय के इतिहास को एक तारतम्य देने में बहुत ही महत्वपूर्ण सिध्द हुए हैं। इन सब तथ्यों को जो कि प्राप्य है उनका स्थान जो कि न्यायोचित् हैं, दिलाने में, इनके इतिहास को रोशनी में लाने का हमारा बेजोड़ प्रयत्न है। सोमवंशी पाण्डववंशी राजवंश की बिल्कुल सही उत्पत्ति का पता लगाना बहुत ही कठिन है, क्योंकि उनका पूरा इतिहास अन्धकार से घिरा हुआ हैं। उनके अभिलेखों में वे **अपना बर्णन चन्द्रवंशजों के महान् परिवार से सम्बन्धित बताते हैं।** चन्द्रमा जो कि समुद्र मन्थन के समय लक्ष्मी के साथ–साथ बाहर निकला था।

'चन्द्रवंश' अर्थात् **'सोमवंश'** में इला के द्वारा बुध से पुरूरवा नामक राजा हुआ और उसकी राजधानी **'इलावास'** जिसको अब इलाहाबाद कहते हुए उसके वंश के लोग पुरूवंशी कहलाये। गंगा नदी के उस पार परगना **'ईल'** अब तक है वहाँ श्री महादेवजी की मूर्ति तथा चन्द्रमा और ईला की मूर्ति भी है। सोमवंशी पाण्डुवंशियों का, सुर्यवंशियों की भाँति अपना एक सुन्दर और श्रेष्ठ कुल था। **"शेरिंग साहब"**[1] लिखते है कि संसार भर की जातियों के अच्छे घराने में ऐसा कोई घराना नहीं है जो भारत की राजपूत जाति की उपेक्षा अपने बड़े वंशबृक्ष अथवा अत्यन्त प्रंशसित इतिहास का अभिमान रखता है।" **महामहोपाध्याय स्वर्गीय – डॉ॰ वासुदेव विष्णु मिराशी** जी ने लिखा है कि इस **'पाण्डववंश' को पुराने लेखों में 'पाण्डुवंश या पाण्डववंश'** कहा गया है किन्तु पिछले लेखों में यह **"चन्द्राकावंश 'चन्दान्वय' शशधरान्वय सोमवंश"** इस प्रकार से निर्दिष्ट हुआ है।[2] आगे स्वर्गीय डॉ॰ बाबू मिराशी जी लिखते हैं कि **"कोशल के पिछले सोमवंशियों से पृथक करने के लिए पाण्डुवंशियों को सोमवंश न कह करके पाण्डववंशी कहना ही श्रेष्ठ है।"** श्री शम्भुप्रसाद हरप्रसाद देशाई जी अपने 'सौराष्ट्र का इतिहास' में लिखते हैं कि यदुवंशियों और पाण्डवंशियों में मधुर सम्बन्ध था। इसी मधुर सम्बन्ध के कारण ही बलराम की पुत्री वत्सला का विवाह भीमसेन के पुत्र घटोत्कच (हिडिम्बी दानवी के गर्भ से) के साथ हुआ था। इसी वजह से पाण्डव लोग बार–बार द्वारका आते थे। गुहिल लोग भी पाण्डववंशीय सोमवंशीय क्षत्रिय हैं। पुष्कर के सं॰ 1243–1186 ई॰ सं॰ के शिलालेख में **गुहिलवंशी 'ठाकुर कोल्हण को गौतम गौत्र** का बताया गया है, जब कि मध्य–प्रदेश में **दमोह के लेख' में विजयसिंह गुहिल को विश्वामित्र गोत्र का बतलाया गया है।** मेवाड़ में गुहिल उनको **वैजपायन गोत्र का मानते हैं।** क्षत्रिय लोग उनके पुरोहितों के गोत्र को अपना गोत्र मानते हैं।[3]

पाण्डव कुल परमाण आद्य गोहिल मूल अेवी, विक्रम बध करनार नृप शालिबाहन चकवे भयो ते पछी ओलाद मां, सोरठ मां सेजक भयो.[4]

इसके आगे इनका गोत्र व इष्टदेवी का भी बर्णन है :–

चनद्रवंश सरदास गौत्र गौतम बखानु,शाखा माधवि सार जे के प्रवरअत्रि जाण, अग्निदेव उध्दारदेव चामुन्डा देवी।[5]

भावनगर राजकुटुम्ब के इतिहास के अनुसार वि॰ सं॰ 134, अर्थात् 78, ई॰ सं॰ में दक्षिण भारत में पैठण शहर में शालिबाहन नामक का राजा हुआ। जो पाण्डवकुल घटोत्कच के वंशजों का वंशज था। उसके वंशजों ने मारवाड़ में लूगी (लूणी) नदी के किनारे बसे खेरगढ़ के भीलराजा खेडवा के पास से उसका राज्य जीत लिया। वहाँ उन्होंने लगभग 20 पीढ़ियों तक राज्य किया। उस वंश का अन्तिम राजा **मोहोदास** हुआ। स्वामी दयानन्द सरस्वती[6] लिखते हैं कि **"घटोत्कच के वंश में नरबाहन और मेघबाहन नामक राजा हुए।"** उन्हीं की पीढ़ियों में आगे चलकर दधिबाहन, मयूरवाहन और षालिवाहन बिभ्रुबाहन, दन्दिबाहन आदि जैसे प्रतापी राजा हुए। पश्चिमी कलिंग में सोमवंशी युवराजा धर्मदेव की ताम्रप्लेट–शिलालेख जिसे कि तीन ताम्रपत्रों में चित्रित किया गया है। राजा जनमेजयदेव के पाँचवें साल के राज्य का जिक्र करता है। राजा जनमेजय को **'परममहेश्वर –परमभट्टारका–महाराजाधिराज परमेश्वर–सोम–कुल–तिलक और 'त्रिकलिंडाधिपति' से विभूषित किया गया है। पाण्डववंशी कर्णदेव के रत्नगिरि शिलालेख से हमें मालूम होता है कि अनुदान का दाता, युवराज धर्मरथदेव हैं जो कि पश्चिमी कलिंग के शासक व महाकुमाराधिराजा था। वह सोम कुल का था।**

(सोमकुल–कमल–कालिकाविकासा–भास्कर) जो आदि–आदि विभूतियों से अलंकृत थे।"

जिन्होंने **'परम्–महेश्वर' परमब्रह्मण्य' 'परम् गुरूदेवताधिदैवत्'** आदि विशेश बड़ी–बड़ी उपाधियों का प्रयोग किया। शिलालेखों के द्वारा उनके कई राजाओं का पता चलता है। पाण्डववंशी राजा तीवरदेव ने, जिसने अपने आप को अपनी मुद्राओं पर **'कोसलाधिपति'** और **'परम्बैष्णव'** कहा है। बिश्णुकुण्डी **राजा माधववर्मा प्रथम** (535–85 ई॰) और मौखरी राजा सुर्यवर्मा (553 ई॰) का समकालीन माना जाता है, निकाल बाहर किया। उसका कोई पुरखा **पाण्डववंशी महाराज उदयन** था, जिसने **मौखरी राजा ईशानवर्मा के पुत्र** और **राज्यपाल सुर्यवर्मा की पुत्री वासटा** से विवाह किया था। **उसके पुत्र बालार्जुन का शासन काल लम्बा रहा।** इस प्रकार षरभपुरियों, मौखरियों और वाकाटकों से पाण्डववंशियों सोमवंशियों का मधुर सम्बन्ध था। **पाण्डुवंशी नरेश तीवरदेव** दक्षिण कोसल (दुर्ग, रायपुर, विलासपुर और उड़ीसा का सम्भलपुर जिला आदि मिलाकर दक्षिण कोसल) कहलाता था।

महाभारत युध्द के बाद से पाण्डुवंशियों की षाखा भारत के कोने–कोने तक फैल गयी। महाभारत का युध्द अर्थात् पाण्डवों का काल निर्णय 5121 बर्श पहले खिरिस्त–पूर्व 3137 वें वर्श की 14 नवम्बर, मंगलवार को शुरू हुआ था। वैशाली (बिहार) की प्राकृत संशोधन संस्था के विद्वान **डॉ॰ डी॰ एस॰ त्रिवेदी** ने अनेक शिलालेखों और ताम्रपत्रों को अभ्यास करके उपरोक्त निश्कर्श निकाला है। 5221 वर्श पहले 14 नवम्बर, मंगलवार को **'महाभारत युध्द'** शुरू हुआ था। खिरिस्त पूर्व 3101 को कलियुग का आगमन हआ था। उससे 36 पहले कौरव–पाण्डवों का युद्ध हुआ था। **युध्द के 10 वें दिन भीष्मपितामह की मृत्यु हुई। तब हिन्दु पंचांग के मुताबिक महाशुक्ल अष्टमी थी। महाभारत युध्द ही पाण्डवों का काल निर्णय था।** पाण्डुवंशीयों के अपने कई गोत्र थे, जैसे कि, अत्रि, षांडिल्य, आत्रेय, प्रवर–अत्रि, षतातप, असित, देवल, व्याघ्रध्, भारद्वाज, पराशर, गौतम, कौडिन्य, और बेद चर्जुवेद, षाखा = वाजसनेसी, कहीं–कहीं पर माध्यन्दिनी एंव कुलदेवी चौमुन्डा, षक्ति, हिडिम्बा देवी (कुल्लु मनाली, हिमाचल प्रदेश) भद्राम्बिका पन्याम्बिका देवी, चन्डी व चन्डिकामाता, सहजानद भैरवी देवी (कांगड़ा) तथा कुलदेवता षंकरजी, अग्निदेव, विश्णु व श्री कृश्ण चन्द्रजी हैं। पारस्कर गृह्मसूत्र है। कहीं–कहीं पर कुलदेवी महालक्ष्मी तथा नदी त्रिवेणी हैं। पाण्डववंशियों द्वारा बनवाये गये मन्दिर भी निम्नलिखित हैं :– (1) **सौरीमाता मन्दिर,** खरोद (जि॰बिलासपुर, म॰ प्र॰) (2) **सिरपुर का लक्ष्मण देऊल व रामदेऊल मन्दिर,** सिरपुर (जिला–रायपुर) (3) **केवटीन मन्दिर** – पुजारीपाली (सारंगढ़) (4) **शिवमन्दिर** – राणीपुर, झुराल – (जि॰ सम्भलपुर–उड़ीसा आदि)। **सोमवंशियों के मन्दिरों में लिंगराजा मन्दिर, परशुरामेश्वर मन्दिर, मुक्तेश्वर मन्दिर, सिध्देश्वरा मन्दिर, राजरानी मन्दिर, बैतल डियुल, सास–बहु मन्दिर शिवमन्दिर–राणीपुर झुराल, आदि 33 मन्दिरों का एक गढ उड़ीसा में मौजूद है भुवनेश्वर आदि में।**

कवि छत्रसिंह इस वंश वालों को घरूका क्षत्रिय ही लिखा है।[6] घरूका नाम घटोत्कच का अपभ्रंश (बिगड़ा हुआ रूप) रूप हैं। 'स्कन्दपुराण' के माहेश्वर खण्ड के अध्याय 60 में घटोत्कच ने श्री कृश्ण जी से अपने वर्ण–धर्म के विशय में पूंछा, तब श्री कृश्ण ने उत्तर दिया **'हे कुरूवंशी !' तुम क्षत्रिय कुल** में उत्पन्न हुए हो, इससे पहले तुम **बल की साधना करो, नमस्कार मन्त्र से (यथा पुष्पं समर्पयामि नमः) पढ़ कर पूजा किया करो, इसने देवी की आराधना किया, इसका पुत्र अन्जनपर्वा व बर्बरीक हुए। बर्बरीक महीसागर संगम में जाकर आद्यशक्ति माँ भगवती की पूजा की और खड्क (तलवार) व तीन बाण एंव धनुष देवी माँ से प्राप्त की। इसका पुत्र महाराज नरवाहन, नरवाहन का पुत्र मेघवाहन हुआ। इसकी बाद की पीढ़ियों में दिवाहन, मयूरवाहन और शालिवाहन आदि जैसे प्रतापी राजा हुए।** विधावारिधि **पं॰ ज्वालाप्रसाद मिश्र** जी (मुरादाबाद निवासी, उ॰ प्र॰) ने इसे अपने **ग्रन्थ 'जातिभास्कर' में सोमवंशी पाण्डववंशी तथा राजवंशी भी लिखा है। इस वंश का घराना आगे चल कर सेनवंश के नाम से प्रसिध्द हुआ।" इसी वंश में रानावंश नामक एक घराना उत्तर–प्रदेश के विभिन्न जिलों में प्रसिध्द हुआ। स्वामीदयानन्द जी 'सत्पार्थ प्रकाश' में लिखते हैं कि लगभग 7वीं सदी ईसा में इस वंश वालों ने 12 पीढ़ी, 151 वर्ष, 11 महीना और 2 दिन इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) पर राज्य किया।** 9वीं सदी से 12वीं सदी ईसा में इस घरूकावंशी क्षत्रियों के लोग बंगाल पर प्रतिश्ठित होकर राज्य किया। मुहम्मद बिनबख्तियार खिलजी के आक्रमण के समय से यह लोग उत्तर–प्रदेश के घाघरा नदी के ईर्द–गिर्द आकर बसे। अब विभिन्न प्रान्त जैसे कि गोण्डा, बाराबंकी, फैजाबाद, बहराइच, गोरखपुर, बस्ती, सीतापुर स्टेट, पीलीभीत आदि जिलों में बसे हुए हैं। नालान्दा शिलालेख में बर्णित बनाफर अर्थात् विश्वफाणी, बनस्पेन, बनस्पर बनफोड़, बनफोड़वा (अंग्रजों ने अपने गजटों में उल्लिखित किया है।) आदि इसी वंश के ही राजा थे।[7] अग्रेंज विद्वान **कर्नल जेम्स टॉड** जी **'राजस्थान का इतिहास'**, भाग पहला, में लिखते हैं कि **इसी वंशमें आगे चलकर 'घरोवाल या घरवाल' क्षत्रिय नामक घराना प्रसिध्द हुआ।[8]**

घटोत्कच से घटौतिया क्षत्रिय प्रसिध्द हुए। इन्हें राजस्थान के 36 राजकुलों में स्थान प्राप्त था। जिन–जिन क्षत्रियों ने अपने पुरातत्व को नहीं छोड़ा और न ही कोई घराना बनाया, वे सभी राजपूत क्षत्रिय, सोमवंशीय पाण्डववंशीय क्षत्रियों के नाम से जाने गये और जिन्होंने अलग–अलग घराने बना लिये वे सभी विभिन्न घरानों के नाम से जाने गये। जैसे कि :– यादव, कौशिक, झाला, सेंगर, चन्देल, षरभपुरिय, मौखरी, राजंवशी, गहरवार, जनवार, बनाफर, तुँअर, तोमर, पाण्डववंशी, घरूकावंशी, सोमवंशी, वाहनवंशी, सेनवंशी, रानावंशी, गंगवंश, बेरूवार, कलचुरि, खाति, खेंगार, तिलोता, काण्ड, घटौतिया, बिलोदिया, बर्बर क्षत्रिय, (सौराष्ट्र–कच्छ) पैलवार, यौधेय, प्रार्जुन, आर्जुनायन, बिसेन, खलोरिया, भारद्वाज, मेघवंशी, षूरवंशी, चौहान, लोमपाद, करवंश और घरोवाल या घरवाल इत्यादि इत्यादि। बहुत से तो किसी एक स्थान पर बसने के कारण उक्त स्थान के नाम से प्रसिध्द हो गये। घरूकावंशी घराने के लोगों ने बहुत समय तक प्रतिश्ठित होकर राज्य किया, परन्तु ज्यों–ज्यों समय गुजरता गया, त्यों–त्यों उनकी असलियत भी धूमिल होती चली गयी और एक अजीब सी रहस्य का विशय बन कर खोज–बीन की बात सा बन कर रह गयी। घरूकावंश के लोग अपने को महाबाहु पाण्डव भीमसेन के पुत्र घटोत्कच (हिडिम्बी दानवी के गर्भ से उत्पन्न) से मानते हैं। इस वंश के क्षत्रिय एक बहादुर और सोम कुल से सम्वन्धित हैं। **"सोमकुल तिलक–भूषणम् पाण्डववंशजम् अस्ति"** आदि के नाम से भी पुकारा गया हैं। घटोत्कच (घरूका) शब्द का अपभ्रंश (बिगड़ा हुआ) रूप हैं। इसका एक नाम घटुका भी है। यद्यपि बीर मायाबी योध्दा घटोत्कच दानव की पुत्री हिडिम्बा से पैदा हुआ था लेकिन उसे **'क्षत्रियतत्व'** प्राप्त था। विदर्भ ऐतिहासिक लेख संग्रह में **डॉ॰ यशवन्त खुशाल देशपाड़े** ने अपनी पुस्तक 'विदर्भ ऐतिहासिक लेख संग्रह', खण्ड पहला (मराठी) में लिखा है कि देवगड़कर गोंडा के

राजवट दरबार में उन तमाम राजाओं की वंशावली दी गई हैं। यह वंशावली **कै. गणपतराव चौधरी** जी को मिली हैं। **प्रथम राजा बिचित्रबीर्य, उनका पुत्र धृतराष्ट्र, पाण्डु और बिदुर इस प्रकार से दिया हुआ हैं। देवगडकर राजवट के राजा महाराजा चन्द्रवंशी थे और पाण्डुवंशी भी थे। चान्दा, गढ़मन्डला व देवगढ़ के राजा पाण्डववंशी थे। इन्हें पाण्डुवंशी होने का प्रमाण देवगढ़कर गोंडा के राजवट लेख नं.1 में दिया हुआ हैं। ये राजा अपने को सोमवंशी पाण्डववंशी मानते थे।** पाण्डुवंशी घरूका क्षत्रियों का निवास स्थान वर्तमान समय में उत्तर–प्रदेश, बिहार, पश्चिमी बंगाल, पंजाब, कांगड़ा, गुजरात, सौराष्ट्र के बाबारियावाड़ में बर्बर राजपूत, गोला राना, राना एंव राजवंशी, मध्यप्रदेश, महोबा, कालिन्जर, कुल्लु, सौराष्ट्र कच्छ तथा हिमान्चल प्रदेश के कुल्लु–मनाली, प्रान्त में पाये जाते हैं। इनका व्यवसाय कृषि–पेशा से लेकर नौकरी–पेशा आदि हैं। **यह अपने को शुध्द पाण्डववंशी सोमवंशी क्षत्रिय मानते हैं। यह सुबिख्यात है कि पाण्डववंशी क्षत्रिय के लोग सोमवंशी तथा कुरूवंशी क्षत्रिय भी थे।**

कुछ फारसी एंव कुछ मुसलमान इतिहासकारों के ग्रन्थों में भी पाण्डववंशीय, सोमवंशीय एंव पौरववंशीय राजाओं का बर्णन पाया जाता है।

(1) 'आइने–अकबरी' :– यह अब्दुल–फजल की कषति है। इसकी भाषा फारसी है। इसकी रचना सन् ई. 1600 से पहले हुई थी। इसमें **सूबा–देहली** का बर्णन करते हुए **हस्तिनापुर के कुछ पाण्डववंशी राजाओं का उल्लेख है।**

(2) 'खुलासतुत–तवारिख' :– यह ग्रन्थ भी फारसी भाषा में हैं। इसमें **देहली साम्राज्य तथा पाण्डुवंशियों का इतिहास है।** इसका कर्त्ता पन्जाबान्तर्गत बटाला– नगर–निवासी मुन्शी–सुजानराय था।

(3) 'राजावालि' :– संस्कृत भाषा में एक राजावलि थी। उसकी बंगला भाषा में छाया सम्वत् 1865 में छपी थी। इसमें **इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) के पाण्डुवंशी राजाओं के नाम हैं। हरगौरी सम्वाद में भी इन्द्रप्रस्थ के पाण्डवों के वंश वालों का उल्लेख हैं।**

(4) 'सत्यार्थप्रकाश':–स्वामी दयानन्द सरस्वती रचित सत्यार्थ–प्रकाश में इन्द्रप्रस्थ के राजाओं पाण्डववंशियों की वंशावली दी हुई हैं। यह वंशावली सत्यार्थ प्रकाश के एकादश समुसल्लास के अन्त में छपी हैं। इसका मूल विकम सम्बत् 1722 या सन् 1725 का था। इसमें **बंगाल के सेनवंशी राजाओं की भी वंशावली** मिलती है।

(5) 'राजस्थान का इतिहास' :–कर्नल जेम्स टॉड़ जी अपने **राजस्थान का इतिहास,** खण्ड पहिला, में लिखते हैं कि **इन्द्रप्रस्थ पर पाण्डुवंशियों का अधिकार** था। महाराज युधिष्ठिर से लेकर महाराज चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य (जो कि सोमवंशीय क्षत्रिय थे) एंव अनंगपाल, पृथ्वीराज तक कई राजाओं ने राज्य किया। पृथ्वीराज के दरबारी कबि व मित्र–परामर्शदाता कबि चन्द्रबरदायी, अन्तिम हिन्दु साम्राट पृथ्वीराज चौहान तृतीय को भी पाण्डुवंशी मानता है। कलचुरि वंश के राजा भी पाण्डववंशी थे। राजस्थान के घटौतिया राजपूत, खेड़ पत्तन के गोहिल, घरवाल या फिर घरोवाल क्षत्रिय सौराष्ट्र कच्छ के बर्बर, गोला राना, आदि भी पाण्डववंशी एंव सोमवंशीय क्षत्रिय हैं।

दक्षिण कोसल (वर्तमान समय का दुर्ग, रायपुर, विलासपुर और उड़ीसा का सम्भलपुर) में 5वीं सदी से 6वीं सदी में पाण्डववंशियों के शासन का बागडोर बड़े जोर–शोर के साथ था। **प्राचीन दक्षिण कोसल के इतिहास में पाण्डववंशीयों का काल स्वर्ग–काल के रूप में माना जाता है।** दक्षिण कोसल के राजाओं में **नन्नदेव, ईशानदेव, तीवरदेव, हर्षगुप्त, चन्द्रगुप्त, महाराज शिवगुप्त बालार्जुन, उद्योतकेशरी, कर्णकेशरी, रणकेशरी, उन्मत्तकेशरी, महाराज जनमेजय, महाराज जनमेजय ययाति और मेकला के पाण्डुवंशी राजाओं में जयबल, मेकला में पाण्डुवंशी सम्राट उदयन भी कौशम्बी में छठीं सदी में राज्य कर रहा था। बत्सराज, नागबल और भरतबल अपर नाम इन्द्र इत्यादि थे।** पाण्डववंशियों में आगे चल कर गणतन्त्रों के रूप में भी प्रसिध्द हुए, उनमें **यौधेय, प्रार्जुन** तथा **आर्जुनायन गणतन्त्र** राज्य प्रमुख है। **यौधेयों की विजय बड़ी मार्के की थी, जिनका साम्राज्य बैक्ट्रिया से बिहार तक फैला था, जिनके साधन अपरिमित थे और जिनके शासक एक सदी से अधिक काल तक 'देवपुत्र' के नाम से जाने जाते (प्रसिध्द) थे। ऐसी शक्ति से टक्कर लेना कोई खेल न था।** डॉ. **R.C.** मजूमदार, डॉ. अनन्त सदाशिव अल्तेकर व डॉ. **D.C.** सरकार ने इन्हें **धर्मराज युधिष्ठिर की सन्तानें माना हैं।** यहाँ पर हम आपको बता देना चाहिते हैं कि युधिष्ठिर से द्रौपदी को जो पुत्र पैदा हुआ था, उसे तो द्रोणचार्य के पुत्र अश्वत्थामा ने एक ही साथ पाँचों पाण्डवों के बच्चों की निरमम हत्या कर दी थी। युधिष्ठिर के दूसरा कोई पुत्र ही नहीं बचा, तो उसकी सन्तान होने का सवाल ही नहीं उठता। मैं लेखक यानि डॉ. चन्द्रिकासिंह सोमवंशी, रिसर्च स्कॉलर ''यौधेयों'' को पाण्डव भीमसेन की सन्तान मानता हूँ। पाण्डव अर्जुन की सन्ताने तो प्रार्जुनायन एंव आर्जुनायन के रूप में थीं। मैं अल्तेकर के मत से सहमत नहीं हूँ। यौधेयो की मार तीसरी और चौथी शताब्दी में बड़ी ही मार्के की थी। प्रार्जुन व आर्जुनायनों को भी धर्मराज युधिष्ठिर के अनुज अर्जुन की सन्तान माना है। लुधियाना के पास सुनेत से यौधेय सिक्कों के साथ मिट्टी की मुहर पर **'योधयानां जयमंत्रं धराणाम्'** यह लेख अंकित है। (प्रो. ए. सो. वं. 1884, पृ. 139)। इनके सिक्कों पर **'योधेय गणस्य जयः'** यह लेख गौरव से नये गणराज्य की विजय घोषणा करता हुआ अंकित है। **सिक्कों पर देवसेनापति कार्त्तिकेय प्रतिष्ठित है। यौधेय गण जो पाण्डववंशी थे यह चौथी सदी ई. के** मध्य तक अच्छी अवस्था में थे, क्योंकि साम्राट समुद्रगुप्त के कर–दाताओं में इनका भी उल्लेख मिलता है। **जोहियावार राजपूत क्षत्रिय इन्हीं के वंशज हैं।** बहावलपुर राज्य की सीमा पर सतलज के दोनों किनारों पर आज भी जोहियाबार नामक एक जगह जोहियावार के नाम से प्रसिध्द हैं। अभिलेख में **'मालवार्जुनायन यौधेय मद्रक'** इस प्रकार से बर्णन मिलता है। इनका राज्य भरतपुर और पूर्वी राजस्थान के बीच कहीं जयपुर के आस–पास में था, इस तरह से उन्हें रखा जा सकता हैं। प्रार्जुनों को जिनके सम्बन्ध में अधिक जानकारी नहीं है, भिलसा के उत्तर में रखा जा सकता हैं। डॉ. बी. ए. स्मिथ के अनुसार, **प्रार्जुन लोग मध्य प्रान्त या (Central Provinves) मध्य–प्रदेश के 'नरसिंहपुर' जिले के निवासी थे।** यह लोग पाण्डव अर्जुन की सन्तान थे। भण्डारकर जी के अनुसार प्रार्जुनों का इलाका **'नरसिंहगढ़'** था। 'नरसिंहपुर' और 'नरसिंहगढ़' में बहुत ज्यादा शिलालेख पाण्डुवंशियों के मिले हैं। **नरसिंहगढ़ और नरसिंहपुर के पाण्डववंशीय क्षत्रिय पाण्डव भीमसेन की सन्तंति में से थे। यह सुबिख्यात है कि पाण्डव लोगं सोमवंशी क्षत्रिय एंव कुरूवंशी क्षत्रिय तथा ब्रह्मक्षत्रिय भी थे।** आर्जुनायन गणराज्य भारत के उत्तरी भाग में थे, जिनके सिक्के मथुरा प्रदेश में पाये गये हैं। डॉ. राय चौधरी हेमचन्द जी के मतानुसार आर्जुनायनों तथा पाण्डव अर्जुन का परस्पर सम्बन्ध स्पष्ट है⊗। सोमवंशी नरेश जनमेजय द्वितीय (ई. सं. 1085), डद्योतकेसरी महाभवगुप्त चतुर्थ के बाद ई. सं. 1085 में उसका पुत्र जनमेजय द्वितीय गद्दी पर बैठा।

उसके बारें में हमें सोमवंशी काल के अन्तिम राजा कर्णदेव की रत्नगिरि प्लेटों से जानने को मिलता है। **सोमवंशी जनमेजय द्वितीय के बाद उसका पुत्र पुरन्जय सोमवंशी गद्दी पर बैठा, रत्नगिरि अभिलेख के द्वारा यहाँ तक की गौंद, दहाला, कलिंग व वेंग के राजा भी उसकी शूर–बीरता से थर्राते थे।** सोमवंशी महाशिवगुप्त कर्णदेव का समय ई॰ सं॰ 1106 से 1118 तक था। कर्णदेव या फिर कर्णकेशरी सोमवंशी नरेशों का अन्तिम राजा था। उसका एक दूसरा खण्ड–युक्त (खडित) अभिलेख जो कि उड़ीसा राज्य म्युजिम, भुनेश्वर में रखा हुआ है, उसे सुर्य–भगवान् की मूर्ति के पीछे गढ़ा गया है। **डॉ॰ पानिग्रहि** ने कर्णदेव की पूरी जानकारी लेने के बाद कहा है कि **''जब पालवंशीय राजा ने कर्णदेव को पराजित किया, गंगवंश के राजा ने उसे अपना राज्य हँसिल करने में मदद की। परन्तु गंगवंश का राजा कर्णदेव को मदद निःस्वार्थ रूप से नहीं कर रहा था, वह सिर्फ सोमवंशी राज्य को अपने राज्य में मिलाने की ताक में था।''** कोरनी प्लेट में इस बात का जिक्र है कि कर्णदेव ई॰ सं॰ 1112 के बाद एक स्वतन्त्र राजा नहीं रह पाया था; उस वक्त तक सोमवंशी शक्ति क्षीण हो चुकी थी; इस प्रकार से सोमवंशी शक्तियाँ अपना दिन गिन रही थीं। **डॉ॰ पानिग्रहि** का तर्क ध्यान देने योग्य है ''धर्मकंडरपा'' जनमेजय वंश के अन्तिम राजा कर्णदेव या कर्णकेशरी की योग्यता व नैतिकता का इस सत्य से ही आसानी से पता लगाया जा सकता है कि अपने आप को धार्मिक साबित करने व अपने पूर्बजों के यश–प्रकाश की खातिर उसने करसरपुरी नामक एक नर्तकी को (जो कि बाद में उसकी रानी बनी) एक कर–मुक्त गाँव **(Village)** दान में दिया।'' **डॉ॰ पानिग्रहि** साहब आगे लिखते हैं कि ''उसके राज्य–काल की बातों को ध्यान–पूर्बक अध्ययन करने पर यह पता चलता है कि उसके अधीनस्थ कर्मचारियों में आपसी फूट व वैमनस्य, झगड़े एंव भ्रष्टाचार भरा हुआ था, जिसे काबू पाने में वह असफल रहा था, **'मण्डला पानजी'** में इस बात का जिक्र है कि सोमवंशी पाण्डववंशी सेना के सेनापति (वाहिनीपति) वासुदेवरथ ने चोदगंग को उड़ीसा पर आक्रमण करने के लिए निमन्त्रण दिया। गंग वंश के राजा भी उड़ीसा की गति–विधियों को ध्यान में रखे हुए थे और आक्रमण करने का न्यौता पाकर, वह एक दिन भेष बदल कर आया और **कटक** पर हमला करके वहाँ का राजा बन बैठा।'' **इस प्रकार 12वीं सदी के अन्त तक अर्थात् 13वीं सदी तक सभी उड़ीसा के व दक्षिण कोसल के पाण्डववंशियों सोमवंशीयों का पतन कागार पर था और इस प्रकार से धीरे–धीरे उनका पतन हो गया। सोमवंशीयों ने 3 सौ से, 4 सौ वर्षों तक के एक लम्बे समय तक शासन करने के बाद उनका साम्राज्य रूपी सुर्य सदा–सदा के लिए अस्त हो गया।** बंगाल के सेनवंशी राजा लक्ष्मणसेन जो कि चन्द्रवंशी (सोमवंशी) था, 12वीं सदी के अन्त व 13वीं सदी के पूर्वाध्द तक उनका भी पतन हो गया। **श्री राखालदास–वंधोपाध्याय** कृत **'बंगाल का इतिहास'** (बंगाली भाषा की छपी भाग–1, पृ॰ 286–288 तक) में उन्होंने लिखा है कि बंगाल के सेनवंशी शासक चन्द्रवंशी (सोमवंशी) थे। विजयसेन के देवपाडा शिलालेख में सेनवंश के मूल–भूत पुरूष (पूर्बज) का नाम बीरसेन चन्द्रवंशी था। देवपाडा **शिलालेख में विजयसेन अपने पूर्वजों को ब्रह्मवादी (ब्रह्मक्षत्रिय) कहा है, इधर पाण्डववंशी क्षत्रिय भी ब्रह्मक्षत्रिय थे। महाराज ययाति भी ब्रह्मक्षत्रिय थे। विद्यावारिधि स्वर्गीय पं॰ ज्वालाप्रसाद मिश्र जी अपने 'जातिभास्कर' नामक ग्रन्थ में लिखते हैं कि घटोत्कच के वंश में आगे चलकर सेनवंश नामक घराना बना।** स्वामीदयानन्द सरस्वती जी भी अपने ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' में स्पस्ट लिखते हैं कि 9वीं सदी ईसा से 12वीं सदी ईसा तक पाण्डुवंशियों ने बंगाल पर राज्य किया। जब हम बंगाल का इतिहास 9वीं से 12वीं सदी ईसा तक का उठातें हैं तो सचमुच में सेनवंशियों को बंगाल पर राज्य करते हुए पाते हैं, इससे यह प्रमाणित है कि बंगाल का सेनकुल सोमवंशी राज–घराने का था। यह बिख्यात है कि पाण्डववंश के लोग ब्रह्मक्षत्रिय थे, इनके गोत्र अत्रि, अत्रिये शतातप थे। जिस समय सेनवंश के लोग करनाटक दक्षिणी भारत से बंगाल में आये, उस समय दक्षिणी भारत में सोमवंशियों पाण्डववंशियें के शासन की बागडोर खूब जोरों पर थी। इस लिए यह कहा जा सकता है कि सेनवंश के लोग करनाटक दक्षिणी भारत से बंगाल में आये। इस लिए यह कहा जा सकता है कि सेनवंश के लोग दक्षिणी भारत के सोमवंशियों के घराने के रहे हों गें, बंगाल का सेनवंशी क्षत्रिय करनाटक के सेनवंशी नरेश **'मुकुन्ददेवसेन'** के वंशज थे और मुकुन्ददेवसेन स्वयं पाण्डववंशीय सोमवंशीय क्षत्रिय था। लेकिन इनकी असलियता धीरे–धीरे धूमिल होती गयी और खोज–बीन की बात सा बन कर रहस्य का विषय बन गयी। **बंगाल का 'आदिशूर' भी दक्षिण कोसल के पाण्डववंशी शासक सुर्यघोष के ही वंशज है। अतः आदिशूर की पुत्री बिलासदेवी का विवाह सेनवंशी राजा विजयसेन से हुई थी। सेनवंशी घटोत्कच वंशी क्षत्रिय थे, जिनका तारतम्य उत्तर–प्रदेश के विभिन्न जिलों में पाया जाता हैं।** मुहम्मद विनबख्तियार खिलजी ने लक्ष्मणसेन पर आक्रमण करके सेनवंश का अन्त बंगाल पर से कर दिया, लेकिन इनके वंशज बिहार के आस–पास आधी शदी एंव 12वीं सदी तक राज्य करते रहें, इन राजाओं में केशवसेन का नाम आता है। इस प्रकार 12वीं सदी एंव 13वीं सदी के पूर्बाध्द तक इनका पतन हो गया। सम्पूर्ण भारत के सोमवंशियों–पाण्डववंशियों का पतन 11वीं, 12वीं और 13वीं सदी तक हो चुका था। **महाभारत कालीन पाण्डव भीमसेन का यह बिशाल वंश वृक्ष धाराशाही होकर सदा–सदा के लिए खत्म हो गया और "घरूकवंशीय क्षत्रिय के रूप में एक चिन्ह छोड गया।"**

डॉ॰ बहादुरचन्द्र छाबडा जी ने ''मेकल के पाण्डववंशी राजा भरतबल के ब्राह्मानी ताम्रपत्र पर एक छोटी सी टिप्पड़ी **'भारत–कौमदी'** भाग 1, पृ॰ 12, में प्रकाशित किया हैं। यह ताम्रपत्र मध्य–प्रदेश के रीवाँ में सोहागपुर तहसील के **'ब्रह्मानी'** नामक गाँव से प्राप्त हुआ है। उसकी वंशावली में निम्नलिखित पीढ़ीयों के नाम मिलते हैं। **जयबल, बत्सराज, नागबल** और **भरतबल** ऊर्फ इन्द्र आदि। **भरतबल की पटरानी वासटा** दक्षिणी भारत (दक्षिण कोसल) के पाण्डववंश की थी।'' गंगवंश, चालुक्यवंश, खिलजीवंश, करवंश, राष्ट्रकूटवंश, चोल और नलवंश के उत्तराधिकारियों एंव शासकों ने मिलकर सोमवंशीय पाण्डुवंशीय शक्तियों का 11वीं, 12वीं एंव 13वीं सदी में अन्त कर दिया। **इस प्रकार से सोमवंशी सत्ता सदा के लिए अन्धकार में खों गयी और उसका प्रकाशमान् सुर्य चार सौ वर्षों तक शासन करने के बाद हमेशा–हमेशा के लिए अस्त हो गया। जिनके युग में बनवाये हुए मन्दिर आज भी उड़ीसा में 33, दक्षिण कोसल में 5–6 से भी अधिक, बंगाल, कामरूप, आसाम, कुल्लु–मनाली, कांगड़ा, हिमान्चल प्रदेश, सौराष्ट्र–कच्छ गुजरात आदि में देखने को मिलते हैं।**

पाँच पाण्डवों से सम्बन्धित् एक बटवृक्ष कांगड़ा (हिमान्चल प्रदेश) में स्थित है। कहतें हैं इस पेड़ को शिव जी ने अपने हाथों द्वारा लगाया था। कांगड़ा में है यह चमत्कारी वृक्ष। जो कि पाण्डवों के समय का है। बस इस बरगद के वृक्ष के एक पत्ते को हाथ में लेकर शिव मन्दिर की तीन बार परिक्रमां करनी पड़ती है और इसी एक पत्ते से घर में

सुख–समृद्धि और शान्ति लाती है। कहने का मतलब यह है कि पाण्डवों के समय के स्थल पूरे भारत में फैले हुए हैं। हैदराबाद में 'भीमाकाली' मन्दिर भी पाण्डव भीमसेन और माँ काली तथा शिव जी के नाम पर पड़ा है। भीमाकाली मन्दिर पहले माँ दुर्गा का मन्दिर था। जब पाण्डव भीमसेन ने यहाँ पर पूजा–अर्चना की तब से यह मन्दिर 'भीमाकाली' के मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध हो गया। इस मन्दिर के बाहर आज भी पाँच–पाण्डवों की मुर्तियाँ पत्थर की बनी हुई है।° घटोत्कच की मूर्ति के मिलने की काफी सम्भावना भी है। खारबेल के पूर्वज 'ऐल' कहलाते थे, उनका मूल स्थान चेदी जनपद था। चेदियों का मूल स्थान आधुनिक बुन्देल खण्ड था वहाँ से वे दक्षिण कोसल के रास्ते कलिंग पहुँचे।✷ **'जशचन्द्रिका'** ऐतिहासिक हिन्दी काव्य है, जिसकी रचना सारंगगढ़ के दरबारी कवि प्रहलाद दूबे ने विक्रम सं. 1838 अर्थात् 1781 ई॰ सन् में की थी, इसमें दक्षिण कोसल (पश्चिमी उड़ीसा) के चौहानों का इतिहास है। प्रो॰ हन्टर महोदय ने अपने इतिहास में महाराज रूद्रप्रतापसिंहदेव को पाण्डववंशीय क्षत्रिय कहा है। महाराज की वंशावली में उन्हें पाण्डववंशीय क्षत्रिय लिखा है। महाराज को सभी लोग सोमवंशीय क्षत्रिय मानते है।Δ **प्राचीन चन्द्रवंशी हजारों वर्षो के बाद भी ये सोमवंशी (चन्द्रवंशी) कहलाते हैं।** बहलोतपुर इनका ठिकाना था और कुमायूँ की तरफ भी इनका ठिकाना रहा है। राजस्थान के विराटनगर से क्षत्रिय बिहार चले गये (पावापुरी में इनका राज्य रहा, वहाँ वे बिराटी कहलाते हैं।) विहार में मिदनापुर में भी और इलाहाबाद तथा लखनऊ के आस पास में भी इन चन्द्रवंशियों का राज्य फैला हुआ था।★ पाण्डुकेक्ष्वर का नाम पाण्डवो के नाम पर पड़ा है। जिन्होने हस्तिनापुर परिक्षित को सौंपने के बाद यहाँ तपस्या की भी। इस गाँव के लोग भोटियों के साथ व्यापार करते हैं और यात्रा सीजन में दुकान खोलते हैं। Page 184 यह गाँव जोशीमठ से नौ मील उत्तर में हैं तथा जोशीमठ और बद्रीनाथ के बीच पड़ता है। यहीं पर पंच बद्री में से एक मन्दिर 'योग बद्री मन्दिर' के नाम से जाना जाता हैं।✷ घटोतिया राजपूत राजस्थान में और भारत के भी तमाम जगहों पर पाये जाते है।♠ अलबेरूनी ने अपने भारत के यात्रा वर्णन में लिखा हैं कि काँगड़ा का ऐक प्राचीन राजा सुशर्मन था। इसके लिए भीमकोट का नाम व्यवहार में किया है।♦ मेरे मतानुसार यह काँगड़ा का प्राचीन राजा सुशर्मन पाण्डववंश के खानदान का रहा होगा। इन्ही के कुलदेवियो में ऐक **'स्वचेछन्द–भैरवी' (Svachechhand –Bhairvi) भी** थी। जो काँगड़ा के रानाओं और पाण्डववंशियों कि कुलदेवि या ईश्टदेवी भी थी।⊗

सन्दर्भ ग्रन्थ

(१) दि हिन्दु टाइम्स ऐण्ड कास्ट' जिल्द 1, भाग 2, अंक 1, पृष्ठ 116। (२) भारतीय जन का इतिहास (200 ई॰ से लेकर 530 ई॰ तक) वाकाटक गुप्त युग By डॉ॰ अनन्त सदाशिव अल्तेकर व डॉ॰ आर॰ सी॰ मजूमदार, पृ॰ 83–87. प्रथम संस्करण। (३) उदयपुर राज्य का इतिहास By श्री गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत। (४) सौराष्ट्र का इतिहास By श्री शम्भुप्रसाद हरप्रसाद देशाई कृत, आई॰ ऐ॰ एस॰, जूनागढ़,। (५) 'सत्यार्थ–प्रकाश' पृ॰ 254. (६) विजयमुक्तावलि में (1886 ई॰ की छपी), मुनशी नवल किशोर प्रेस, लखनऊ (उत्तर–प्रदेश). (७) मध्यप्रदेश के पुरातत्व का सन्दर्भ ग्रन्थ By डॉ॰ राजकुमार शर्मा, जबलपुर विश्वविद्यालय. (८) खेमराज श्री कृष्णदास, बेंकेटेश्वर स्ट्रींम प्रेस, बम्बई से (हिन्दी अनुवाद के साथ) प्रकाशित, सन् 1925 ई॰ सन् में और 2008 में द्वितीय आवृत्ति। ⊗ प्राचीन भारत By विद्याधर महाजन, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली ○ India T.V. चैनल 'धर्म' पर दिखाया गया प्रोग्राम, ३:०० P.M. दिनाँक २६.१०.२००६, दिन इतवार। ✷ आदीवासी बस्तर का बृहत् इतिहास By डॉ॰ हीरालाल शुक्ला, द्वितीय खण्ड, पृ॰ १०, और हाथी गुम्फा–प्रशस्ति, पंक्ति – १. Δ आदीवासी बस्तर का प्राचीन इतिहास By डॉ॰ हीरालाल शुक्ला, चर्तुर्थ खण्ड, (बस्तर के चालुक्य और गिरिजन) (1324 ई॰ से 1777 ई॰ तक) और Epigraphia Indica, 12–24 तक ,प्रथम संस्करण 2007, B.R. Publishing Corporation, Delhi. ★ क्षत्रिय राजवंश By प्रो॰ रघुताथासिंह काली पहाड़ी, पृ॰ 371। ✷ गढ़वाल हिमालय का गजेटियर By श्री एच॰ जी॰ वाल्टन, आई॰ सी॰ एस॰, (इलाहाबाद १८१० ई॰) (आगरा और अवध संयुक्त प्रान्त के जिला गजेटियरों का ग्रन्थ संख्या ३६), अनुबादक श्री प्राकश थपलियाल, भा॰ सू॰ से॰, पृ॰ 184 उत्तरखण्ड प्रकाशन (हिमालय संचेतना संस्थान) आश्रिबदरी, चमौली, (उत्तरान्चल), प्र॰ सं॰ 2005 (ISBN – 81 901001 49) ♠ घटोतिया राजपूत ही घटोत्कच के वंशज हैं जो कि राजस्थान में व अन्य और जगहों पर पाये जाते हैं। 'क्षत्रिय दर्शन' के सम्पादक श्री अयलसिंह भाटी के मतानुसार श्री कृष्ण के 75 वीं (पचहत्तर) पीढ़ी में राजा बीरमपाल के पुत्र बुधपाल का वंशज ''बनाफर'' क्षत्रिय होना लिखा है। श्री अचलसिंह भाटी जी के पर्शनल पत्र, जो कि उन्होंने मूझे दिनाँक 28 गुलाई 1989 ई॰ सन् को लिखे थे। क्षत्रिय दर्शन, पृ॰ 49. क्षत्रिय दर्शन, केशरी विलास, मोर्डन मास्केट, बीकानेर (राजस्थान)।